संज्ञानात्मक मनोविज्ञान

डॉ. संजीवनी ठाकुर

संज्ञान कुछ महत्वपूर्ण मनसिक प्रक्रियाओं का सामूहिक नाम है जिसमें ध्यान स्मरण निर्णय लेना, भाषा निपुणता और समस्याऐं हल करना शामिल है ।

संज्ञान का अध्ययन मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र भाषा विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान और विज्ञान की अन्य शाखाओं के लिये जरुरी है। आमतौर पर हम कह सकते हैं, कि संज्ञान दुनियां से जानकारी लेकर फिर उसके बारे में अवधारणाएं बनाकर उसे समझने की प्रक्रिया को भी कहा जाता है ।

संज्ञान शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है जानना या समझना । यह एक ऐसी बौध्दिक प्रक्रिया है जिसमें विचारों के द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है । संज्ञानात्मक विकास का अर्थ मानसिक विकास के व्यापक अर्थ में किया जाता है । जिसमें बुध्दि के अतिरिक्त सूचना का प्रत्यक्षीकरण, पहचान और व्याख्या से हैं। अतः संज्ञान में मानव की विभिन्न मानसिक गतिविधियों का समन्वय होता है। संज्ञानात्मक सिध्दांत इस बात पर बल देता है कि व्यक्ति किस प्रकार सोचता है, किस प्रकार महसूस करता है और किस प्रकार व्यवहार करता है यह सम्पूर्ण प्रक्रिया अपने अंदर ज्ञान के सभी रुप यथा – चिन्तण प्रेरणा, प्रत्यक्षण को शामिल करती है।

संज्ञान का अर्थ :– मनोवैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार संज्ञान वह मानसिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा ज्ञान अर्जन किया जाता है जिसमें ज्ञान या जानकारी, प्रत्यक्षीकरण, अतः क्रिया और तर्क शामिल होते हैं। संज्ञान शब्द का प्रयोग अधिगम और चिंतन को व्यवस्थित करने के लिये किया जाता है। संज्ञानात्मक शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग महान् दार्शनिक अरस्तु ने आकृष्ट किया । अरस्तु ने सर्वप्रथम संज्ञानात्मक पर ध्यान देना शुरु किया जिसमें स्मृति क्षेत्रों, प्रत्यक्षीकरण पर मानसिक प्रतिरुप सम्मलित होते हैं। संज्ञान शब्द का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है ।

जैसे :– अवधान, स्मृति और कार्य स्मृति, निर्णय और मूल्यांकन, तर्क और गणना, समस्या और समाधान ।

संज्ञान के विविध स्वरुप होते हैं जैसेः–

1. चेतन और अवचेतन
2. मूर्त और अमूत
3. अतः प्रज्ञात्यात्मक और संकल्पनात्मक

संज्ञानात्मक प्रक्रिया में अस्तित्ववान ज्ञान के आधार पर नये ज्ञान को उत्पन्न किया जाता है ।

संज्ञान की परिभाषाऐं :–

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार :– विचार अनुभव और इन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान अर्जित करने और अवबोध की मानसिक क्रिया या प्रक्रियायें ही संज्ञान कहलाती है।

वेबस्टर शब्दकोष के अनुसार – जानकारी ज्ञान और प्रत्यक्षीकरण की क्रिया ही संज्ञान हैं।

नाईस्सर के अनुसार –: संज्ञान शब्द उन सभी प्रक्रियाओं का संदर्भ हैं, जिनके द्वारा इन्द्रिय क्रियायें रुपान्तरित, मात्रा कम व्याख्यायित एकत्रित खोई शक्ति को अर्जित तथा प्रयुक्त करता है।

संज्ञान की कोई निश्चित परिभाषा नहीं हो सकती । संज्ञानात्मक प्रक्रिया की व्याख्या करने के लिये संज्ञानात्मक प्रक्रिया की जटिलता को समझना आवश्यक है। सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि सामान्य दृष्टिकोण से व्यक्ति संसार का प्रत्यक्षीकरण कैसे करता है हर समय व्यक्ति के चारों और सूचनाओं का भंडार होता है, जिनके आधार पर अपनी इन्द्रियों के द्वारा आस–पास की सूचनाओं को ग्रहण करके उनके निष्कर्षो को जानकर बदलना या क्रिया करना ही संज्ञान कहलाता है । बालक आयु और अनुभव के आधार पर इस दुनियां को समझने के लिये सक्षम होता है संज्ञानात्मक विकास में बालक के ज्ञान प्राप्त करने की जन्मजात वह योग्यता सम्मिलित होती है जो मास्तिष्क की संरचना तथा क्रियाओं से संबंधित होती है।

अधिगम में संज्ञान की भूमिका –: संज्ञान और अधिगम शिक्षा मनोविज्ञान के अति महत्वपूर्ण केन्द्र बिन्दु है। एक तरह से मनुष्य अपनी दैनिक दिनचर्या मं सीखने में संज्ञान का प्रयोग करता है । शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को मजबूत बनाने के लिये अधिगम में संज्ञान की भूमिक को समझना अत्यंत आवश्यक है।

अधिगम में संज्ञान की भूमिका को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है –:

(1) बालक की अधिगम प्रक्रिया की सफलता पर उसका विकास निर्भर करता है व्यापक रुप से अधिगम को व्यवहार परिवर्तन से व्यवस्थित किया जाता यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि बालक क्या सीखता है और कैसे सीखता है उसकी वृध्दि किस तरह से हो रहा है इसी के आधार पर बालक का विकास निर्भर करता है । सभी आठ संज्ञानात्मक प्रक्रिया अधिगम में महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती है। बालक जब कुछ सीखता है तो उसके बारे में उसे पहले से कुछ अनुभव रहता है।

कैसे हुआ क्या वे दूसरे व्यस्क से प्राप्ता अनुभवों से इसे सीखे हैं या किसी के सुझाव या टिप्पणी से सीखें है।

उपयुक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि छौटे बच्चे ऐसे कामों में सफल होते हैं, जिनमें चिंतन की अपेक्षा सूक्ष्म महत्वपूर्ण होते हैं। जिसका सबूत इस प्रकार है –:

(1) छोटे बच्चों को इस तथ्य की पहचान करनें में कठिनाई होती है, कि दूसरा व्यक्ति क्या सोच रहा है ।

(2) ऐसे बच्चे जानते है कि चिंतन बातचीत देखने की क्रियां से भिन्न है परन्तु वे इसको समझ नही पाते, कि यह एक गुप्त घटना है।

(3) ऐसे बच्चों को विभिन्न घटना का ज्ञान तो होता है। परन्तु वे इस बात से अवगत नहीं होते कि इस घटना का ज्ञान उन्हें कैसे हुआ क्या वे इसे दूसरों से प्राप्त अनुभव से सीखें हैं, या किसी दूसरे के सुझाव टिप्पणी से सीखे हैं।

(2) सूचना संसाधन संज्ञान –:

संज्ञानात्मक विकास की व्याख्या बच्चों में संज्ञान के मौलिक पहलुओं जैसे – अवधान,स्मृति या मेटासंज्ञान से सम्बंधित वर्ध्दित क्षमताओं के रुप में करता है । संज्ञान के इन सभी क्षेत्रों में यह देखा गया है कि उम्र बीतने से बच्चों में क्षमताएं विकसीत एंव मजबूत होते चले जाती है क्योंकि उनमें सूचनाओं को संसाधित करने की क्षमता तीव्र होती है।

1. संसाधन की गति,अवधान तथा अनुक्रिया अवरोध –: इस क्षेत्र में किये गये कुछ महत्वपूर्ण अध्ययनों की समीक्षा कैल द्वारा किया गया है उम्र बीतने के साथ बच्चों में सूचनाओं को संग्रहित करने की गति भी तीव्र होते जाती है 8 साल तथा 12 साल की आयु में इसकी दर पहले की अपेक्षा थोड़ी मंद होते जाती है । इतना ही नही बच्चों का अवधान विस्तार तथा ध्यान भंग करने वाले उछीपकों के प्रति आवेगशीलता अनुक्रियाओं को अवरुध्द करने की क्षमता उम्र के साथ बढ़ती है अधिक आयु के बच्चों में संगृत विस्तुती पर अधिक ध्यान तथा असंगत विस्तुती की अपेक्षा करने में सफल पाये जाते हैं।
2. स्मृति–: अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि बच्चे में उम्र बीतने के साथ उनका चलन स्मृति उन्नत होता जाता है। इस तथ्य की संपुष्टि गैथरकोल और उनके सहयोगियों के अध्ययन द्वारा स्पष्ट हुआ है । उन्होने अपने शोध में यह पाया कि बड़े बच्चों को यदि शब्दों या संख्याओं या लंबे वाक्यों की सूची को पढ़कर सुनाया जाता है तो वे छोटे बच्चों की तुलना में उनसे अधिक स्मृति में संचित रख पाते हैं। तथा उसे दोहरा भी लेते हैं। इतना ही नही बड़े बच्चे छोटे बच्चों की तुलना में अपने चलन स्मृ में दृष्टि स्थानिक सूचनाओं को अधिक देर तक धारण करके रख पाते हैं । तथा जरुरत पड़ने पर उसमें जोड़ तोड़ भी उत्तम ढंग से कर पाते है।

बड़े बच्चे छोटे बच्चों की अपेक्षा स्मृति को उन्नत बनाने के लिये अधिक उपयुक्त उपायों का उपयोग कर पाते हैं । फ्लेवेल ने अपने एक संख्याओं कि सूची को याद करने के लिये समय दिया जाता है, तो स्कूली छात्र शायद ही कभी स्वेच्छा से रिहर्सल का उपयोग करते हैं, परन्तु 8 से 10 साल के बच्चे उन्नत स्मृति के लिए इन शब्दों का संख्याओं को म नही मन दोहराते रहते हैं।

3. मेटा संज्ञान –: मेटा संज्ञान से तात्पर्य अपनी संज्ञानात्मक क्षमताओं के बारे में अपना समझ तथा सुझ–बुझ से होता है। इसके बहुत सारे तत्व है, जिनमें मेटाबोध तथा मेटा स्मृति प्रधान है। अध्ययनों में स्पष्ट हुआ है, कि बच्चों में बढ़ती उम्र के साथ मेटा संज्ञान भी मजबुत हो जाता है। छोटे बच्चों की तुलना में बड़े बच्चे सामान्यतः यह निर्णय उत्तम ढंग से कर पाते हैं कि वे दिए गए सामग्रियों या चीजों को कितना अच्छी तरह से समझते हैं। इसके आधार पर वे यह भी तब आसानी से निर्णय कर लेते हैं कि क्या उन्हें दिए गए सामग्रियों को और अधिक अध्ययन करने की जरुरत है।

संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ–:

1 संवेदी प्रेरक अवस्था –: जन्म से 2 वर्ष तक यह अवस्था चलती है। इसमें बच्चे का शारिरिक विकास होता है ।

2 पूर्व संक्रियात्मक अवस्था –: जन्म से सात वर्ष तक इस अवस्था को माना गया है । इसी अवस्था में बच्चे आत्म केन्द्रित होने का प्रयास करते है।

3 मूर्त संक्रियात्मक अवस्थास –: यह सात वर्ष से 11 वर्ष तक चलती है । इस उम्र में बालक विभिन्न मानसिक प्रतिभाओं का प्रदर्शन करता है।

4 औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था –: यह अवस्था 11 साल से शुरु होकर पौढवस्था तक जारी रहता है। इस अवस्था में बालक परिकल्पनात्मक वेग से समस्याओं के बारे में विचार करता है।

बच्चों के संज्ञानात्मक विकास में केवल बच्चा ही नहीं अपितु उसका संदर्भ भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अतः हम कह सकते हैं, कि बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में बालक के करीबी,परिवार,शिक्षक आदि का सांस्कृतिक नियमों सामाजिक संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। सामाजिक और सूक्ष्मकारकों में सर्वप्रथम बच्चे के आस–पास के करीबी लोग आते हैं जैसे – अभिभावक, शिक्षक आदि ये बालक को प्रत्यक्ष रुप से प्रभावित करतें हैं।

अगले तंत्र में मध्यवर्तीय तंत्र आते हैं। इसमें परिवार, शिक्षक तथा अन्य इकाईयां आपस में बालक के विकास को प्रभावित करती हैं, इन परस्पर क्रियाओं में अभिभावक शिक्षक को प्रभावित करतें हैं शिक्षक, परिवार के लोग एवं बालक को प्रभावित करती है। बहितंत्र के

अंतर्गत यह एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिनका बच्चे पर अप्रत्यक्ष रुप से प्रभाव पड़ता है जैसे शिक्षक का विद्यालय प्रशासन से संबंध इत्यादि ये सभी तंत्र आपस में परस्पर क्रिया करते हैं।

संज्ञासनात्मक विकास का शैक्षिक महत्व –:

इस सिध्दांत का शिक्षा के सैध्दांतिक और व्यवहारिक पक्ष पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यह एक सृजनशील दृष्टिकोण में सहयोग करता है। इसका संबंध शैक्षिक के साथ वातावरण पाठ्यक्रम सामग्रियों और अनुदेशन से होता है, जो कि विद्यार्थी के शारीरिक योग्यताओं के साथ–साथ उनकी सामाजिक और भावात्मक विकास में साथ–साथ सहयोग प्रदान करती है। शिक्षकों के लिये इस सिध्दांत का विशेष महत्व होता है, क्योंकि यह शिक्षक के शिक्षण में सहयोग प्रदान करता हैं।

(1) संज्ञानात्मक सिध्दांत के अंतर्गत बालक के अवधान पर ज्यादा जोर देना चाहिये बाकि उनकी उपलब्धि पर। बच्चों द्वारा किसी समस्या पर दी गई प्रतिक्रिया या उत्तर की सत्यत जानने के साथ–साथ या उत्तर प्राप्त करने के लिये प्रयोग में लायी गई प्रतिक्रिया पर भी ध्यान देना चाहिये । संज्ञानात्मक प्रतिक्रिया पर ही अधिगम अनुभव गठित होते हैं। जब शि बच्चों से प्राप्त उत्तर की सराहना करते हैं प्रोत्साहित करते हैं। तभी बच्चों के उचित संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की संरचना होती है।

(2) अधिगम प्रक्रिया में स्व पहल और सक्रिय सहभागिता को निर्णायक भूमिका की मान्यत देनी चाहिये । शिक्षक को उपदेशात्मक शिक्षण के स्थान पर क्रिया विविधता पूर्ण शिक्षण जोर देना चाहिये।

(3) बच्चों के चिंतन को बढ़ाने की कोशिश की जानी चाहिये बच्चों को अधिक गति और शीघ्रता करवाने से बालक का शिक्षण बद्तर हो जाता है।

(4) विकासात्मक प्रगति में व्यक्तिगत विभेदों का अनुमोदन होना चाहिये । बच्चों के विव साथ–साथ सीखने की क्षमता भी बालकों में अलग–अलग होती है। अतः शिक्षक को स बच्चों के लिये कक्षागत गतिविधियों के द्वारा विशेष शिक्षण का प्रयास करना चाहिये ।

(5) इस सिध्दांत की विशेषता है कि शिक्षक को विद्यार्थियों से स्वक्रिया द्वारा ज्ञान और युक्त गतिविधिओं का संचालन करवाना चाहिये यहां शिक्षक की भूमिका मार्दर्शक के रु होनी चाहिए । विद्यार्थियों के कार्य कलाप में हस्तक्षेप नही करना चाहिये।

(6) विद्यार्थियों को यदि संभव हो तो खेलों के द्वारा अधिगम पर जोर देना चाहिये।

(7) शिक्षक द्वारा कक्षा शिक्षण में आवश्यकता के अनुरुप मूर्त सामग्रियों एंव दृश्य साध उपयोग किया जाना चाहिये ।

(8) किसी कठिन या जटिल प्रकरण के शिक्षण के लिये शिक्षक को अधिगम को सहज बनाने हेतु पूर्ववर्ती संज्ञानात्मक अनुभव से सम्बंधित उदाहरण का प्रयोग करते हुए प्रकरण की व्याख्या की जानी चाहिये।

संज्ञानात्मक विकास :– संज्ञानात्मक विकास अध्यापकों के लिये अति महत्वपूर्ण क्षेत्र है। अधिगम और संज्ञान एक–दूसरे के पूरक है। अधिगम को ज्ञान व कौशल अर्जन की प्रक्रिया के रुप में परिभाषित किया जाता है। इस ज्ञानार्जन व कौशल अर्जन की प्रक्रिया में संज्ञाननिहित होता है । संज्ञान में संवेदना, प्रत्यक्षण, कल्पना, धारणा पुनमरण, समस्या, समाधान, चिंतन तर्क आदि मानसिक क्रियाएं सम्मिलित होती है।

संज्ञानात्मक विकास का पहला सम्बधं उन तरीकों से होता है। जिनसे बालक की आंतरिक मानसिक शक्तियां अर्जित, विकसीत और अवसर के अनुरुप प्रयुक्त होती है। उदाहरण के तौर पर समस्या समाधान, स्मृति और भाषा शैशवस्या में सीखना, याद करने और सूचनाओं को प्रतिक रुप में प्रयुक्त करने की क्षमता बहुत सामान्य स्तर पर होती है। वे छोटे–छोटे सकारात्मक कार्य करने में सफल होते हैं। जैसे – सजीव और निर्जीव में अंतर करना, कुछ वस्तुओं को पहचानना आदि। बाल्यावस्था के दौरान अधिगम और सूचना सम्बध्द किशोरावस्था की ओर बढ़ते बालक सूक्ष्म चिंतन की ओर भी बढ़ने लगते हैं। अनुभव और अधिगम संज्ञानात्मक विकास में सहायक होते हैं । संज्ञानात्मक विकास का अर्थ बालकों में किसी संवेदी सूचना को ग्रहण करके उस पर चिंतन तथा क्रमिक रुप से उसे इस लायक बनाने से होता है। जिसका प्रयोग विभिन्न परिस्थिति में समस्या समाधान के लिये किया जा सकें । संज्ञानात्मक विकसा के सम्बंध में जीन पियाजे का अध्ययन अत्यत महत्वपूर्ण है। अपने अध्ययनों के आधार ने संज्ञानात्मक सिंध्दात का प्रतिपादन किया, जो शिक्षा और शिक्षकों के लिये मील का पत्थर है।

संज्ञानात्मक विकास – बांदे

संज्ञानात्मक विकास का अर्थ,परिभाषा विशेषताएं – आर.के.रोशन

शिक्षा मनोविज्ञान – अरुण कुमार सिंह

शिक्षा मनोविज्ञान में मापन एंव मूल्याकंन – विपिन अस्थाना

अधिगम कर्ता एंव अधिगम प्रक्रिया – रीता चौहान

अधिगमकर्ता एंव अधिगम प्रक्रिया – एस के मंगल

शिक्षा मनोविज्ञान – पी.डी. पाठक